कातना-बुनना

ईशा सरदेसाई द्वारा पुनर्लिखित

नियोल के पैरों के नीचे की ज़मीन नर्म, सूखी और गहरे गेरूए रंग की थी। अपने आप में यह ज़मीन देखने में अनूठी और मनमोहक थी — बल्कि कहना चाहिए कि मन्त्रमुग्ध कर देने वाली थी। यह कंकड़-पत्थर से जड़ी थी; हर एक कंकड़-पत्थर का रूपाकार और रंग अलग-अलग था। यहाँ पर अनेक पशु-पक्षियों और कीड़ों ने अपना घर बना लिया था। और यहाँ पौधे भी थे जिन्होंने इस ज़मीन को उसकी बनावट, उसका आकार दिया था, एक कहानी दी थी जिसकी जड़ें गहरी और कहीं बहुत-ही नीचे थीं।

फिर भी नियोल को हमेशा से ही आकाश में अधिक रुचि थी। उसके मन को उस अद्भुत जगत में खो जाने के लिए किसी बहाने की ज़रूरत नहीं थी। निस्सन्देह वह दक्षिणपश्चिमी अमरीका के जिस भाग में रहती थी, वहाँ का आकाश विस्मित कर देने वाला था। सूर्यास्त के समय उसका बैंगनी-नारंगी रंग, स्वप्न समान दिखाई देता था।

नियोल अपने घर के बाहर बैठी थी; वह सन्ध्या समय के आकाश में बादलों को बहता हुआ देख रही थी। उसे इन बादलों में अनेक आकृतियाँ नज़र आ रही थीं : ख़रगोश, पंछी, हृदय, मधुमक्खी।

वह अपनी उँगलियों से आकाश में इन आकृतियों को बनाना शुरू कर ही रही थी कि उसे कहीं नज़दीक से आती आवाज़ें सुनाई दीं। *टक, बक। टक, बक।* उसने एकाएक नीचे देखा।

वहाँ उसके सामने एक गधा था और वह धूल से सनी सड़क पर चला जा रहा था। *टक, बक। टक, बक।* गधे की पीठ पर ऊन का एक बड़ा-सा गट्ठर लदा था।

यह ज़रूर पिता जी की दुकान पर जा रहा है, नियोल ने सोचा। उसके पिता जी एक जुलाहे थे, और एक-बार ऊन से धागा कात लिए जाने पर वे हाथ से कपड़ा बुना करते थे। नियोल फिर से ऊपर बादलों की ओर देखने लगी।

टक, बक। और फिर से वही आवाज़ आई। बस इस बार, ऐसा लगा कि सड़क पर बहुत सारे खुरों की टाप थी। नियोल ने नीचे देखा, और बिल्कुल, एक और गधा था। उसने ग़ौर से देखा — दरअसल, तीन गधे थे। अरे नहीं-नहीं, रुको, चार! या फिर पाँच?

बल्कि गधे एक के पीछे एक, उसकी ओर आते ही जा रहे थे और उनकी पीठ पर लदे थे ऊन के बड़े-बड़े गट्ठर। उन्हें देखकर नियोल को चिन्ता होने लगी। उसके पिता जी भला इतनी सारी ऊन का क्या करेंगे? इसका क्या होगा? इतनी जल्दी इन सबसे कपड़ा कैसे बनेगा? उसके पिता जी के पास तो केवल एक ही करघा है। इसे कातेगा कौन और बुनेगा कौन?

आकाश में अँधेरा छाने लगा और नियोल की आँखें नींद से बन्द होने लगीं। *कातेगा कौन?* उसने खुद से पूछा। *बुनेगा कौन?*

कातना, बुनना . . . उसके दिमाग में कहीं ये शब्द घूम रहे थे। *कातना, बुनना. . .* और जल्द ही नियोल सो गई।

सोते ही उसकी आँखों के सामने का दृश्य बदल गया। अब नियोल सपना देख रही थी और सपने में उसने देखा कि धुँधली-सी दिखाई देने वाली आकृतियों का एक झुण्ड कहीं दूर से उसी की ओर चला आ रहा था। जैसे-जैसे ये आकृतियाँ पास आती गईं, वे स्पष्ट होती गईं। वे झबरीली दिख रही थीं। उनके चार पैर थे। और उनमें से हर एक के ऊपर किसी तरीक़े का बोझा लदा हुआ था। “अरे नहीं!” नियोल चौंक गई। “गधे!”

अचानक उसकी आँख खुली; उसने ज़ोर से साँस अन्दर खींची, और बाहर तभी छोड़ी जब उसे एहसास हुआ कि उसके ऊपर तो तारे और रात का निःशब्द आकाश है। *आऽऽऽह।* वह उठ कर बैठी और उसने अपनी पलकें झपकाईं।

और फिर — उसने दोबारा अपनी पलकें झपकाईं। उसने अपनी आँखें मलीं और उसके सामने जो था उसने उसे ध्यान से देखा। *नहीं,* उसने सोचा। *ऐसा नहीं हो सकता!* वहाँ फिर से गधे थे, दो, चार, छः और वे इस तरह क़दमताल करते हुए आगे बढ़ रहे थे मानो वे किसी अनोखी जानवरों की फ़ौज के सदस्य हों। और उनकी पीठ पर रखा ऊन का गट्ठर उनके हर क़दम के साथ ऊपर-नीचे हिल रहा था।

नियोल के मन में फिर से सवालों का ताँता लग गया। *कातेगा कौन? बुनेगा कौन?* "इतनी सारी ऊन!" उसने धीमे स्वर में अपने आप से कहा। "इतनी सारी ऊन . . . "

गधों का विचार और ऊन की तस्वीर उसके दिमाग पर पूरी तरह से छा गई, और नियोल फिर-से ज़मीन पर लेट गई। इससे पहले की वह जान पाती, वह वापस सपनों की दुनिया में पहुँच गई थी, और वहाँ फिर से गधे ही थे। फ़र्क बस इतना था कि अबकी बार उनकी तादात सैकड़ों में थी और वे जप रहे थे। *कातेगा कौन? बुनेगा कौन?*

नियोल फिर से उठकर बैठ गई और उसने देखा — *नहीं, नहीं, नहीं!* गधों की एक और पंक्ति सड़क पर चली आ रही थी। वह काँपने लगी। उसकी हथेलियाँ पसीने-पसीने हो गईं। उसे लगा, *मेरी तबियत ठीक नहीं है।* उसने अपने माथे पर हाथ लगाया; वह हल्का गरम था। *मुझे बुखार है!* उसने सोचा।

फिर से वही सवाल आया : "कातेगा कौन और बुनेगा कौन?" रात से सुबह हो गई और नियोल हर साँस के साथ यही सवाल दोहरा रही थी।

नियोल के पिता जी दरवाज़े से बाहर जा ही रहे थे कि उन्होंने नियोल को ऐसा कहते हुए सुना।

उन्होंने दहलीज़ के बाहर क़दम रखते हुए पूछा, "तुम क्या कह रही हो नियोल?"

"कातेगा कौन? बुनेगा कौन?"

नियोल के पिता जी ने चिन्ता से उसकी ओर देखा।

"क्या मतलब है तुम्हारा 'कातेगा कौन और बुनेगा कौन?'"

फिर उनकी नज़र गधों पर पड़ी।

"अच्छा," उन्होंने कहा। "तुम चिन्ता मत करो, बेटा। मैं इस ऊन से कपड़ा बनाऊँगा।"

नियोल तो सुनने को तैयार ही नहीं थी। "पर यह *कितनी सारी* ऊन है!" उसने आश्चर्य से कहा। *"कातेगा कौन? बुनेगा कौन?"*

उसके पिता जी ने एक बार फिर उसे समझाने का प्रयास किया, पर उसका कोई असर नहीं हुआ। अब उन्होंने उसका ध्यान बटाने की कोशिश की, कुछ पौधे दिखाए जो हाल ही में उगे थे। पर उससे भी कुछ नहीं हुआ। नियोल अभी भी वहीं अटकी थी। *"कातेगा कौन? बुनेगा कौन?"*

अन्ततः नियोल के पिता जी ने हार मान ली और वे मदद माँगने निकल पड़े। वे एक समझदार व्यक्ति को जानते थे जो पास में ही रहते थे। ये व्यक्ति हमेशा अजीबो-गरीब चीज़ों का हल निकाला करते थे। शायद उन्हें पता हो कि उनकी बेटी, नियोल के साथ क्या करना है।

नियोल अब भी दहलीज़ पर ही बैठी थी जब उसके पिता जी उन समझदार व्यक्ति को लेकर घर वापस आए। वह बहुत धीमे स्वर में बुदबुदा रही थी। "कातेगा कौन? बुनेगा कौन?"

वे व्यक्ति नियोल के बगल में घुटनों के बल बैठ गए। "क्या हुआ?" उन्होंने प्यार-से पूछा।

"ऊन!" नियोल ने झट से कहा, वह अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से देख रही थी। "इतनी सारी ऊन! इसे कातेगा कौन और बुनेगा कौन?"

"अरे हाँ," उन व्यक्ति ने कहा। "ऊन।"

"आप जानते हैं उसके बारे में?" नियोल ने पूछा।

"अरे, हाँ, हाँ, बिल्कुल मैं जानता हूँ," उन व्यक्ति ने कहा। वे एक क्षण के लिए रुके, और अचानक उनके बोलने का लहज़ा बदल गया; वे थोड़े और गम्भीर हो गए। "पर क्या तुमने वह ख़बर सुनी?"

"कौन-सी ख़बर?" नियोल ने कहा।

उन व्यक्ति ने एक गहरी साँस ली। उन्होंने अपना सिर हिलाया। "देखो," उन्होंने कहा। "सारी ऊन तुम्हारे पिता जी की दुकान पर लाई गई थी। परन्तु फिर . . . आग लग गई।"

नियोल के पिता जी यह सुनकर दंग रह गए। उन्हें किसी भी आग के बारे में पता नहीं था! वे कुछ बोलने ही वाले थे, परन्तु उन समझदार व्यक्ति ने अपने हाथ के इशारे से उन्हें चुप करा दिया।

“हाँ,” उन व्यक्ति ने कहा, वे अभी-भी नियोल की ओर देख रहे थे। “तुम्हारे पिता जी की दुकान में आग लग गई। अब चिन्ता मत करो; दुकान ठीक है। परन्तु वह सारी ऊन जो तुमने देखी थी — गधों की पीठ पर बन्धे हुए वे सारे गट्ठर — *वे सब* जलकर राख हो गए हैं। ज़रा-सी भी ऊन नहीं बची।”

“ज़रा-सी भी ऊन नहीं बची?” नियोल ने खुश होकर धीमे स्वर में कहा।

“ज़रा-सी भी ऊन नहीं बची,” समझदार व्यक्ति ने कहा।

नियोल मुस्कराई, उसकी आँखों में अब चमक थी। वह हँसने लगी।

“ज़रा-सी भी ऊन नहीं बची!” वह खिलखिलाकर हँसने लगी।

और फिर नियोल कूदकर खड़ी हो गई और नाचने लगी। वह गोल-गोल घूमने लगी। उसने अपनी बाहें फैलाईं और वह अपना सिर पीछे की ओर झुकाकर आकाश को देखने लगी। उसके पाँव ज़मीन पर पड़ ही नहीं रहे थे।

© २०१९ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।